ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

पातंजल योगसूत्र में दुःख का स्वरूप एवं निरोध

अरविंद कुमार यादव, शोधार्थी एम०फिल० (योग एवं आयुर्वेद विभाग)

डॉ० शाम गणपत तिखे, सहायक प्राध्यापक (योग एवं आयुर्वेद विभाग)

साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, साँची (म०प्र०)

Email- yadavarvind330@gmail.com *Mob- 8505978512*

शोध सारांश

भारतीय दार्शनिकों, आत्मज्ञानियों एवं विचारकों का खोज का केंद्रिय विषय दुःख रहा है। आधुनिक युग में भी जितने तरह के शोध कार्य चल रहे हैं सबका उद्येश्य है कि संसार से दुःख को कम किया जाय। मनुष्य का जीवन को आसान बनाया जाय। पातंजल योग सूत्र, योग का एक उत्तम ग्रंथ है जिसका मुख्य विषय है; हेय, हेयहेतु, हान और हानोपाय अर्थात **दुःख, दुःख का कारण, दुःख निरोध और दुःख निरोध का मार्ग**। महर्षि पातंजलि ने विवेकवान व्यक्ति के लिए यह संसार को दुःखमय बताया है। चार प्रकार के दुःख से सभी प्रभावित होते हैं– परिणाम दुःख, ताप दुःख, संस्कार दुःख एवं गुणवृतिविरोध दुःख। दुःख का कारन है द्रष्टा और दृष्य का संयोग, विवेकज्ञान के द्वारा इस दुःख का निरोध संभव है। अष्टांग योग–यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि के अभ्यास से विवेकज्ञान की प्राप्ति होती है जिससे प्रकृति और पुरूष के बीच के भेद का बोध होता है एवं दुःख का कारण समाप्त हो जाता ूहै। आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है एक अविचल आनंद की अवस्था प्राप्त होता है जिसे कैवल्य, मोक्ष या मुक्ति की अवस्था कहते हैं।

कूट शब्द : योगसूत्र, दुःख, विवेकज्ञान, अष्टांग योग एवं कैवल्य।

प्रस्तावना

महर्षि पातंजली कृत योग सूत्र, योग साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसकी रचना 200 ई0 पू0 के लगभग हुआ है। योग सूत्र सांख्य दर्शन का प्रयोगिक ग्रंथ माना जाता है। योग सारे सम्प्रदायों और मत–मतान्तरों के पक्षपात और वाद–विवाद से रहित सार्वभौम धर्म है, जो तत्व का ज्ञान स्वयं अनुभव द्वारा प्राप्त करना सिखलाता है और मनुष्य को उसके अन्तिम ध्येय तक पहुँचाता है। सारी श्रुति–स्मृतियां योग की महिमा का गान करती हैं। योगसुत्र में वर्णित प्रकृति, पुरूष, कार्यकारण का सिद्धांत, सृष्टि रचना एवं तत्वों की संख्या आदि सांख्य दर्शन से ही लिया है, जबकी योग के आठ अंग, चर्तुव्यूह, चित प्रसादन के

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

उपाय एवं धर्ममेघ समाधि आदि भगवान बुद्ध दर्शन से लिया गया है। महर्षि पातंजली ने योग सूत्र में ईश्वर और अष्टांग योग आदि को जोड़कर एक उत्कृष्ट ग्रंथ की रचना किया है। जो दुःख से मुक्ति के लिए, विवेकख्याति एवं कैवल्य प्राप्त करने हेतु साधन का वर्णन बडे. ही वैज्ञानिक ढंग से किया है। इस ग्रंथ में चार अध्याय एवं 195 सूत्र है। प्रथम अध्याय को समाधिपाद कहा जाता है जिसमें 51 सूत्र है– चित, ईश्वर,योगअंतराय एवं समाधि मुख्य विषय है। द्वीतिय अध्याय को साधनपाद कहा जाता है इसमे 55 सूत्र है– क्रिया योग, दुःख का स्वरूप, प्रकृति, पुरूष और अष्टांग योग मुख्य विषय है। तृतीय अध्याय को विभुतिपाद कहा जाता है इसमे भी 55 सूत्र है– जिसमें संयम सिद्ध होने से विभिन्न प्रकार के सिद्धियां एवं विभुतियां प्राप्त होती है उसी का वर्णन है तथा चतुर्थ अध्याय को कैवल्यपाद कहा जाता है इसमें 34 सूत्र है– सिद्धि प्राप्ति के पांच अन्य उपाय, चार प्रकार के कर्म, योगी का कर्म, धर्ममेघ समाधि एवं कैवल्य मुख्य विषय के रूप मे वर्णित है। अतः प्रस्तुत शोध में पातंजल योग सूत्र में वर्णित दुःख के विभिन्न स्वरूप, उसका कारण एवं दुःखों से मुक्त होने का मार्ग खोजने का प्रयास किया जाएगा।

अध्ययन की आवश्यकता

जीवन के आरंभ से ही मनुष्य दुःख से मुक्त होने के लिए प्रयासरत है। आरंभ्कि काल में मनुष्य के पास भोजन, वस्त्र एवं घर जैसे आधारभुत वस्तुओं का स्थाई प्रबधं नहीं था, शिकारी की तरह जीवन व्यतित करता था। जंगली जन्तुओं सहित मौसम से जीवन को खतरा था। फिर जानवरों को पालतु बनाने लगे, खेती करना आरंभ किया। क्रमश आग, पहिया और अन्य औजारों का खोज एवं अविष्कार हुआ। गुफाओं, कदराओं से निकल कर घर, गॉव, नगर मे रहने लगे। धीरे–धीरे सभ्यता का विकास हुआ लेकिन इस संसार का स्वभाव ऐसा है कि एक तरह की समस्या खत्म हो नही पाती है कि दुसरा उत्पन्न हो जाता है। इसिलिये ऋषि पातंजली एवं भगवान बुद्ध जैसे मनिषियों ने इस संसार को दुःखमय बताया। सांख्य योग में वर्णित तीन प्रकार के दुःख अनादिकाल से कमोबेस सभी को प्रभावित करता रहा है– अधिभौतिक दुःख, अधिदैविक दुःख एवं अधिअध्यात्मिक दुःख। इसके अतिरिक्त आज की जो आधुनिक सामाजिक रचना एवं जीवन पद्धति है उसने भी बहुत नई तरह की मानसिक, शारीरकि एवं सामाजिक समस्यायों – बिमारियों को जन्म दिया है। आज भारत सहित दुनियां के 80 प्रतिशत लोग किसी न किसी बिमारी से पीडित है। तमाम तरह के धार्मिक और वैज्ञानिक ज्ञान के बावजुद इस संसार मे दुःख कम नही हुआ। भगवान बुद्ध ने

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

कहा कि 'समुंद्र में जीतना जल है उससे ज्याद आंसु दुःख मे बहाया है मनुष्य ने'। अतः दुःख के विविध रूप को समझने और उसका निरोध के मार्ग की खोज करने की आवश्यक्ता आज भी उतना ही है जितना कभी पहले रहा होग बल्कि आज तो और भी ज्यादा है क्योंकि इस आधुनिक युग मे समस्यायें और बढ़ी है।

दुःख का स्वरूप

स्वामी विवेकानंद ने कहा है, ''सबलोग सुख की खोज करते है; पर अधिकतर लोग मिथ्या वस्तुओं में उसको ढुंढते फिरते हैं। इन्द्रियों मे कभी किसी को सुख नही मिलता। सुख तो केवल आत्मा मे मिलता है। अज्ञान ही सब दुःखों का कारण है''। आरंभिक काल से मनुष्य सुख की खोज कर रहे हैं, सुख प्राप्त करने के लिए यह जानना आवश्यक है कि दुख क्या है? महर्षि पातंजली ने कहा है कि विवेकवान व्यक्ति के लिए सब विषय दुःख है। मुख्य चार प्रकार के दुःखों का वर्णन किया है।

परिणाम दुःख – विषय सुख के भोगकाल में स्थूल दृष्ठि से सुखद प्रतीत होता है किन्तु उसका परिणाम दुःख ही है। विषयों की भोग से इंद्रियों की तृप्ति नही होती है बल्कि राग क्लेश उत्पन्न होता है, ज्यों ज्यों भोग का अभ्यास बढ़ता है त्यों त्यों तृष्णा बलवान होती है। विषयों के भोग से इंद्रियां दुर्बल हो जाती है और अंत में विषय भोग की शक्ति बिलकुल नही रहती किन्तु तृष्णा सताती है। अतः यह सभी विषय भोग सुख परिणाम में दुःख ही है। बढ़ी हुई तृष्णा के पुर्ती के लिए अच्छे–बुरे कर्म करना पड़ता है, भोग्य वस्तुओं की प्राप्ति में असमर्थ होने से या विघ्न आने पर द्वेष उत्पन्न होता है। प्राण्यिों की हिंसा के बिना भोग की सिद्धि नही होती। अतः राग–द्वेष और हिंसादि का परिणाम अवश्य ही दुःख है यह भी परिणाम दुःख है।

ताप दुःख – सभी प्रकार के विषय–भोगरूप सुख विनाशशील है; उनका अंत होना निश्चित है, अतः भोगकाल में उनका विनाश की सम्भावना से भय के कारण ताप दुःख बना रहता है। इसी तरह जो एक व्यक्ति को भोग्य वस्तु प्राप्त होता है वह शतिशय होता अर्थात उनसे बढ़कर दुसरों के पास होता है यह देखकर ईष्या से जलता है तथा भोग के अपुर्णता से भी भोगकाल मे संताप बना रहता है यह ताप दुःख है।

संस्कार दुःख – सुख के भोग के जो संस्कार चित पर पड़ते है उनसे राग उत्पन्न होता है। जितना सुख भोग करता है राग भी उतना गहरा होता है, उससे और अधिक की मांग बढ़ती है जिसके लिए शुभ–अशुभ कर्म करना पड़ता है, विघ्न होने से द्वेष उत्पन्न होता है। इस

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

प्रकार राग–द्वेष के भी संस्कार पड़ते रहते हैं और यह संस्कार संसार चक्र मे घुमाते रहते हैं जो परिणाम मे संस्कार दुःख है।

जब कोई प्रेम में धोखा खाता है तब उनको याद करके रोता है और दुःखी होता है क्योंकि प्रेम सबंध के सुख की अनुभूति संस्कार के रूप मे चित मे जमा होता है, यह संस्कार दुःख है। जब किसी का व्यापार नष्ट हो जाता है या नौकरी छुट जाती है तो लोग आत्महत्या तक कर लेते हैं क्योंकि व्यापार या नौकरी से जो धन और धन से जो भोग प्राप्त होता है उसका संस्कार चित मे विद्यमान रहता है यह संस्कार दुःख है। ये सभी संस्कार दुःख के उदाहरण हैं।

गुणवृतिविरोध दुःख – प्रकृति के तीनों गुण सत, रज और तम में अंर्तविरोध है। तीनों का गुण भिन्न है लेकिन तीनों एक साथ विद्यमान रहता है। सतोगुण का कार्य प्रकाश, ज्ञान और सुख है। रजोगुण का कार्य क्रिया, हलचल एवं निर्माण है तथा तमोगुण का कार्य अंधकार, अज्ञान और दुःख है। सुख भोगकाल में सतोगुण की प्रधानता होती है लेकिन रजो एवं तमो गुण का अभाव नही होता है। अतः उस समय भी दुःख और शोक विद्यमान रहता है; इसलिए सुख भोग काल में भी शांति नही मिलती है क्योंकि तीनो गुण एक साथ रहते हैं। इसी तरह रजोगुण प्रधान होने के समय सतोगुण एवं तमोगुण कमजोर अवस्था में उपस्थित रहता है और तमोगुण प्रधान होने के समय रजोगुण एवं सतोगुण कमजोर अवस्था में उपस्थित रहता है। यह गुणवृतिविरोध दुःख है।

गीता के 5/22 श्लोक में कृष्ण कहते हैं '' इंद्रियों और विषयों के संयोग से उत्पन्न होने वाले जितने भी भोग है वे सब के सब दुःख है, दुःखों के ही कारण है तथा सभी आदि और अन्त वाले है अतः विवेकी मनुष्य उनमें नही रमते है।

जिस प्रकार चिकत्साशास्त्र चतुर्व्यूह है– रोग, रोगहेतु, आरोग्य तथा भैषज्य उसी प्रकार यह मोक्षशास्त्र भी चतुर्व्यूह है– संसार, संसारहेतु, मोक्ष तथा मोक्षोपाय उनमें से अत्यन्त दुःखमय संसार हेय है; प्रकृति और पुरूष का संयोग हेयहेत हुे, संयोग की शाश्वती निवृति हान–मोक्ष है तथा सम्यग्दर्शन और अष्टांग योग मार्ग हानोपाय है। प्रकृति और पुरूष का संयोग ही दुःख का कारण है और यह संयोग अविद्या के कारन होता है। अनित्य मे नित्य, अपवित्र में पवित्र, दुःख में सुख तथा अनात्मा में आत्मा की अनुभुति को अविद्या कहते है। मिथ्या दृष्टि ही अविद्या है। अविद्या के अभाव होने पर प्रकृति और पुरूष के संयोग का अभााव हो जाता है अर्थात वियोग हो जोता है। यह वियोग की स्थिति ही कैवल्य है, पुरूष जब प्रकृति से

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

अलग होता है तब अपने मुल स्वरूप में शुद्ध चेतन आत्म तत्व होता है यही अवस्था कैवल्य की अवस्था है। लेकिन संयोग का अभाव तब होता है जब निश्चल और निर्दोष विवेकज्ञान की प्राप्ति हो। विवेकज्ञान का अर्थ है प्रकृति और पुरूष के अपने मुल स्वरूप में अलग–अलग ज्ञान होना। यह विवेकज्ञान सात स्तरों में विभाजित है।

1. ज्ञेयशुन्य अवस्था– जो कुछ जानना था जान लिया है वह सब अनित्य और परिणामी है।
2. हेयशुन्य अवस्था– जिसका अभाव करना था कर लिया है अर्थात द्रष्टा और दृष्य के संयोग का अभाव।
3. प्राप्यप्राप्त अवस्था– जो कुछ प्राप्त करना था प्राप्त कर लिया अर्थात समाधि द्वारा कैवल्य अवस्था की प्रप्ति हो चुकि है।
4. चिकिर्षाशुन्य अवस्था– जो कुछ करना था कर लिया अर्थात हान का उपाय।
5. चित की कृतार्थता– चित ने अपना कार्य भोग और अपवर्ग दोनो पुरा कर दिया है अब उसका कोई प्रयोजन नहीं है।
6. गुणलिनता– चित अपने कारन रूप गुणों में लीन हो रहा है, अब उसका कोई कार्य नहीं हे।
7. आत्मस्थिति– पुरूष सभी गुणों से अलग होकर अपने अचल भाव में स्थित हो गया है।

प्रथम चार को कार्यविमुक्ति प्रज्ञा और अन्तिम तीन चितविमुक्ति प्रज्ञा कहलाता हैा इस सात प्रकार के ज्ञान का अनुभव करने वाले योगी जीवनमुक्त कहलाता है और चित जब अपने कारण मे लीन हो जाता है तब विदेहमुक्त कहलाता है।

दुःख निरोध मार्ग

दुःख को नष्ट करने वाले उपाय विवेकज्ञान को प्राप्त करने के लिये महर्षि पातंजली ने अष्टांग योग अनुष्ठान करने का निर्देश दिया है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि ये योग के आठ अंग है।

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोंग्ष्टावगानि।। 2/29

यम – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रहृमचर्य तथा अपरिग्रह ये पांच यम है। यह योग के आचार है, शील है। इसे सामाजिक नैतिकता भी कहते हैं।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

अहिंसा – मन वाणी और शरीर से किसी प्राणी को दुःख नहीं देना अहिंसा है। किसी का भी हानी नही पहुॅचाना और सब प्राणी के लिए सद्भाव रखना अहिंसा है। अहिंसा सिद्ध होने पर सभी प्राणी साधक के सामने वैर त्याग देते हैं।

सत्य – जैसा देखा सुना अनुभव किया वैसा ही अभिव्यक्त करना सत्य है, जो प्राणियों के लिए हितकर हो, सुनने मे प्रिय हो, सत्य हो। सत्य सिद्ध होने पर वाणी सिद्ध हो जाती है वरदान और शाप देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। सत्याचरण से सुख और शान्ति मे वृद्धि होती है।

अस्तेय – दुसरे के अर्जित सम्पदा का अपहरण करना, छल से या बल से उसे अपना बना लेना अस्तेय है, चोरी है इसमे टैक्स चोरी सहित सभी प्रकार के भ्रष्टाचार सम्मिलित है; इन सब प्रकार के चोरियों का अभाव अस्तेय है इसकी सिद्धि से सम्पदा स्वयं प्रकट हो जाती है, अर्थात धन का अभाव नहीं रहता है।

ब्रह्मचर्य – मन वाणी और शरीर से होने वाले सभी प्रकार के मैथुन इंद्रिय सुख का त्याग करना और वीर्य की रक्षा करना ब्रह्मचर्य है। इसकी सिद्धि से बल लाभ होता है।

अपरिग्रह – अपनी आवश्यकता से अधिक भोग्य वस्तुओं का संग्रह नहीं करना अपरिग्रह है। इसकी सिद्धि से पूर्व जन्म का ज्ञान हो जाता है। अधिक सम्पति, अधिक व्यस्तता तनाव का कारण होता है। इसिलिए अपरिग्रह व्रत के पालन से सुख–शांति बनी रहती है।

उर्पयुक्त पांच व्रत सभी स्थानों कालों में पालन करना चाहिये तब यह महाव्रत कहलाता है। यम के बाद पांच नियम है जो स्वयं की शुद्धि के लिए है। इसे व्यक्तिगत नैतिकता कहते है। इसके अभ्यास से शरीर तथा मन शुद्ध होता है, परिणामस्वरूप आधि–व्याधि से मुक्त अच्छे स्वास्थ की प्राति होती है। दुःख में कमी होती है सुख मे वृद्धि होती है और विवेकज्ञान प्राप्त करने मे सहायक है।

शौच – जल, मिट्टी, साबुन आदि से शरीर तथा वस्त्र की सफाई बाहरी शुद्धता है, जबकी जप, तप, ध्यान आदि व्रत से अन्तःकरन शुद्ध होता है। शरीर पूर्णरूप से शुद्ध होने पर अपने अंग मे वैराग्य और दुसरों से संसर्ग न करने का भाव उत्पन्न होता है। शौच के नियमित अभ्यास से शरीर और मन स्वस्थ रहता है।

सन्तोष – कर्तव्य कर्म करके जो भी परिणाम प्रप्त हो उसी मे संतुष्ट रहना और किसी भी प्रकार का तृष्णा न करना ही संतोष है। संतोष व्रत की महता बताने के लिए कुछ कहावतें प्रसिद्ध है– ''संतोषी सबसे सुखी'' तथा ''जिसको कछु न चाहि वह जग सहंशाह'' आदि।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

तप – अपने ध्येय की पुर्ति के लिए साधना या कर्तव्य कर्म करने में जो भी कष्ट हो उसे सहना, आवश्यक व्रत अनुष्ठान करते हुए निष्काम भाव से सुख–दुःख, सर्दी–गर्मी, हानि–लाभ, मान–अपमान को बिना विचलित हुए सहन करना ही तप है। तप से अन्तःकरन शुद्ध हो जाता है और शुद्ध अन्तःकरन ही सुख है, योग मार्ग में सहायक है।

स्वाध्याय – जिससे अपने कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध होता हो सके ऐसे महात्माओं, आत्मज्ञानियों और अर्हत पुरूषों का वचन को पढ़ना जैसे– गीता, धम्मपद, योग सूत्र, कबीर वाणी और गुरूग्रंथ साहिब आदि को स्वध्याय कहते हैं। स्वध्याय का एक अर्थ है ऐकांत मे बैठकर अपने अन्तःकरन का स्वभाव, गुण–दोष का अध्ययन करना और उसमें आवश्यक सुधार करना। स्वध्याय करने से ईष्टदेव का दर्शन होता है।

ईश्वरप्राणिधान – समस्त कर्मो को ईश्वर को समर्पण कर देना, ईश्वर के गुण–लिला का श्रवन–मनन करना उसके आज्ञा और शिक्षा का पालन करना उनसे प्रेम करना ही ईश्वरप्राणीधान है। ऐसा करने से भय चिन्ता कम होती है और समाधि एवं सुख की प्रप्ति होती है।

यम–नियम अष्टांग योग के आधार है, साधन है और अपने आप मे साध्य भी है। इनके पालन से जीवन मे रोग शोक भय दुःख कम हो जाता है और सुख, शांति, आनंद, उत्साह और ध्यान की वृद्धि होती है। इसके बाद आसन का अभ्यास है।

आसन – किसी एक स्थिति में स्थिर और सुख पूर्वक लम्बे समय तक बैठने को आसन कहते है। आसन के अभ्यास से द्वंद्व समाप्त होते हैं और प्रणायाम के अभ्यास के लिए आवश्यक है। हठयोग मे बहुत प्रकार के आसनों का वर्णन है लेकिन पातंजल योग सूत्र में किसी प्रकार का कोई नाम नही बताया है। आसन स्थिर और सुखदायी होना चाहिए।

प्राणायाम – आसन के सिद्धि होने के बाद प्रणायाम का अभ्यास करना चाहिए। श्वास–प्रश्वास को दीर्घ और सुक्ष्म करके स्थिर करने को प्रणायाम कहते हैं। प्राणायाम में रेचक, कुम्भक और पुरक तीन अवस्था होती है और एक चौथी अवस्था भी होती है जिसमें श्वास–प्रश्वास अपने आप होता है केवल सजगता से देखना है सब प्रकार के विषय और चिन्ता का त्याग करके। बाद मे हठयोग ग्रंथो मे 8 प्रकार के प्रणायाम का विकास हुआ जो मन को नियनत्रित और शरीर को शुद्ध करने मे उपयोगी है। प्रणायाम के अभ्यास से 72000 नड़ियों की शुद्धि होती है चित की चंचलता कम होती है, मन की धारणा क्षमता बढ़ती है और अज्ञान का आवरण नष्ट होकर ज्ञान का प्रकाश का उदय होता है **''तत क्षियतेप्रकाशवर्णम''**।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

प्रत्याहार – प्राणायाम के अभ्यास करने से मन और इंद्रियां शुद्ध हो जाती है; उसके बाद इंद्रियों की वाहयवृति को सब ओर से समेटकर मन में विलिन करने के अभ्यास का नाम प्रत्याहार है। प्रत्याहार सिद्ध हो जाने पर साधक इंद्रिय विजय हो जाते हैं।

धरणा – शरीर के बाहर या भीतर कही भी किसी स्थान में चित को ठहराना धारणा कहलाता है।

ध्यान – जब चित ध्येय वस्तु में एकाग्र हो जाय और अन्य सब प्रकार के वृतियां बन्द हो जाए वह अवस्था ध्यान कहलाता है। योग सूत्र 1/34–39 में ध्यान करने की कुछ विधियों का वर्णन किया है।

समाधि – ध्यान के चरम उत्कर्ष का नाम समाधि है। जब ध्येय विषय की सत्ता ही शेष रहता है और साधक की सत्ता विस्मृत हो जाती है यह अवस्था ही समाधि कहलाती है। यह अष्टांग योग का अतिंम अंग है। समाधि के मुख्य दो भेद हैं। 1. सम्प्रज्ञात समाधि 2. असम्प्रज्ञात समाधि।

- **सम्प्रज्ञात समाधि –** इस अवस्था में ध्येय विषय का स्पष्ट ज्ञान रहता है, चित एक वस्तु पर केन्द्रित रहता है जिसके साथ उसकी तदात्मयता रहती है। इसे सबिज समाधि भी कहते हैं। सम्प्रज्ञात समाधि चार प्रकार की होती है।
  - सवितर्क समाधि – इसमें स्थूल विषय पर ध्यान लगाया जाता है जैसे मुर्ति, गुरू तथा शरीर के अंग आदि।
  - सविचार समाधि – इसमें सुक्ष्म विषय पर ध्यान लगाया जाता है।
  - आनन्द समाधि – इसमें ध्यान का विषय इंद्रियां रहती है।
  - अस्मिता समाधि – इसमें ध्यान का विषय अहंकार होता है। अहंकार को अस्मिता कहा जाता है।
- **असम्प्रज्ञात समाधि –** इसमें ध्यान का विषय ही लुप्त हो जाता है। इस अवस्था में आत्मा अपने यथार्थ स्वरूप को पहचान लेती है, प्रकृति और पुरूष का अलग–अलग बोध हो जाता है। चित वृतियों का निरोध हो जाता है। आत्मा–पुरूष का संबंध विभिन्न विषयों से छुट जाता है। विवेकज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। दुःख के कारण का बोध हो जाता है यह अवस्था ही कैवल्य की अवस्था है, मोक्ष की अवस्था है इसे ही निर्बिज समाधि कहते हैं।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 7 July 2021

निष्कर्ष

संसार दुःखो से भरा है, यहां जो चीजें भोगकाल में सुखदायक प्रतीत होता है वो भी अन्ततः दुःख देने वाला ही साबित होता है। योगान्तराय, पंच क्लेश, अविद्या दुःख है और दुःख का कारन भी है। साधक शुक्ल कर्म कर पुण्य संचय करते हैं। मैत्री, करूणा, मुदिता एवं उपेक्षा के द्वारा मन को शुद्ध किया जाता है, अष्टांग योग का अभ्यास श्रद्धा के साथ करने से विवेक ज्ञान की प्राति होती है अर्थात प्रकृति और पुरूष का वास्तविक ज्ञान का बोध हो जाता है। पुरूष अर्थात आत्मा का अपने मूलरूप में साक्षात्कार होना ही कैवल्य की प्राप्ति मानी जाती है। योगी के इसी अवस्था को मुक्त अवस्था कहा जाता हैं। योगी सब दुःखों को समाप्त कर जन्म–मृत्यु के बधंन से मुक्त हो जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीस्वामी, तीर्थ, ओमानंद (2012) *पातंजलयोगप्रदीप,* गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र.।
2. गोयन्दका, हदिकृष्णदास (2011) *योग–दर्शन,* गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र.।
3. विवेकानन्द, स्वामी (2016) *राजयोग* रामकृष्ण मठ, नागपुर।
4. विवेकानन्द, स्वामी (2016) *ज्ञानयोग,* रामकृष्ण मठ, नागपुर।
5. हरिहरानंद अरण्य, श्रीमत स्वामी (2017) *पातंजलयोगदर्शन,* व्यासभाष्य, पब्लिकेषन मोतीलाल बनारसीदास।
6. श्रीवास्तव, सुरेषचन्द्र (2015) *पातंजलयोगदर्शनम् (व्यासभाष्य),* चौखंभा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
7. भारद्वाज, ईश्वर एवं अन्य सम्पादक मण्डल, *पातंजल योगसूत्र,* (2001) उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय, हल्दवाली, उत्तराखण्ड़।
8. *पातंजल योग सूत्र,* (2016) विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी, इगतपुरी
9. Swami Satyanand Saraswati, *Four chapters on freedom*, 2013, Yoga publications trust, Munger, Bihar, India
10. *धम्मपद,* (2015) विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी, इगतपुरी